Knowledge Consortium of Gujarat
Department of Higher Education - Government of Gujarat
Journal of Humanity
ISSN: 2279-0233
Continuous issue-5 | January – March 2016

अभिज्ञानशाकुन्तल में स्मृतिविभ्रम एवं प्रत्यभिज्ञान

कालिदासगिरां सारं कालिदासः सरस्वती ।

चतुर्मुखोऽथवा साक्षाद्विदुर्नान्ये तु मादृशाः ।।[1]

भारतीय संस्कृति का ज्योतिर्धर, सभ्यता तथा ऐश्वर्य की चरम सीमा तक पहुँची उज्जयिनी नगरी के भौतिकतावादी जीवन के प्रत्योता, अनुभव दृष्टा कालिदास अपनी युगचेतना का प्रतिनिधि कवि हैं । वेदान्त, धर्मशास्त्र, व्याकरणशास्त्र, नाट्यशास्त्र, अलंकारशास्त्र, सांख्यदर्शन, योगदर्शन तथा न्यायवैशेषिक दर्शन के ज्ञाता कालिदास ने कलाभिज्ञता से सज्ज इन्द्रियों द्वारा रसपान किया हैं ।

जिसमें संस्कृत नाटक की जो भी लाक्ष्यणिकताएँ हैं वे उत्तम स्वरूप में साकार हुई हैं, जिसमें गहरी रसानुभूति और रसनिष्पत्ति हैं, संघर्ष मर्मस्पर्शी और ह्रदयंगम हैं, कवि का भव्य जीवन दर्शन चरमोत्कर्ष पर साकार हुआ हैं, ऐसा कवि कालिदास का 'अभिज्ञानशाकुन्तल' नाटक मात्र संस्कृत साहित्य में ही नहीं वरन् साहित्य जगत में विश्वविदित हुआ हैं ।

महाकवि कालिदास के वेदान्तदर्शन और न्यायवैशेषिक दर्शन का परिचय हमें अभिज्ञानशाकुन्तल में कई जगह प्राप्त होता है । 'अभिज्ञानशाकुन्तल' शीर्षक में ही हमें अभिज्ञान शब्द द्वारा स्मृतिविभ्रम और प्रत्यभिज्ञान का परिचय होता हैं । नाटक का केन्द्रीय कथानक स्मृतिविभ्रम और प्रत्यभिज्ञान के आधार पर निर्मित हैं । दुर्वाशा का शाप राजा की स्मृति को मूर्छित करता हैं, तब अँगुठी देखकर राजा को शकुन्तला का प्रत्यभिज्ञान होता है । इस प्रकार समग्र नाटक की परिचालित शक्ति इसी स्मृतिविभ्रम और प्रत्यभिज्ञान में समाहित हो ऐसा महसूस होता हैं ।

प्रत्यभिज्ञान का अर्थ श्री केशवमिश्र तर्कभाषा में इसप्रकार देते हैं -''प्रत्यभिज्ञाप्रत्यक्षे ह्यतीतापि पूर्वावस्था स्फुरत्येव[2] ।'' अर्थात् प्रत्यक्ष में पूर्वावस्था बीत चुकने के बाद भी स्फुरीत होती हैं । अर्थात् प्रत्यभिज्ञता यानि पहचान जाना । जैसे कि देवदत्त को हम एक बार मिले, फिर उसकी छविं हमारे दिमाग में संग्रहित हो गई । वर्षो बाद अचानक ही वह दुबारा मिले तब हम उसे पहचान जाते हैं कि 'सोऽयं देवदत्तः ।' यह प्रत्यभिज्ञा हैं । इसमें देवदत्त की पूर्वकालीन छविं जागृत होकर स्मृति का कारण बनती हैं और साथ साथ वह खुद भी सामने खडा है । इस प्रकार प्रत्यभिज्ञा में अनुभव और स्मृति का मिश्रण रहता हैं । अभिनवगुप्ताचार्य प्रत्यभिज्ञावाद के प्रतिपादक थे । उनके मतानुसार 'प्रत्यभिज्ञा' शब्द का अर्थ है – प्रतिभाभिमुख ज्ञान । किसी वस्तु का ज्ञान जब उसके सम्मुख आनेपर होता है तब उस ज्ञान को प्रत्यभिज्ञा कहते हैं ।

अभिज्ञानशाकुन्तल में प्रारंभ में ही नान्दी श्लोक में 'श्रुतिविषयगुणा' अर्थात् शब्द आकाश का गुण हैं ऐसा उल्लेख हैं, जो न्यायवैशेषिक दर्शन का परिचय कराता हैं । तर्कभाषा में शब्द के लिए कहा हैं – शब्दः श्रोत्रग्राह्यो गुणः[3] । अर्थात् श्रवणेन्द्रिय से ग्राह्य गुण ही शब्द हैं, वह आकाश का विशेष गुण हैं । अतः प्रारंभ में ही कवि का न्यायदर्शन विषयक ज्ञान प्रतीत होता हैं ।

नाटक की प्रास्ताविक में सूत्रधार ने नटी से कहा आज कौनसा रूपक मंचस्थ करना हैं ? ऐसा प्रश्न करके नटी सूत्रधार को कालिदास का 'अभिज्ञानशाकुन्तल' नाटक मंचस्थ करने के उसके पूर्व संकल्प की याद दिलाती हैं । सूत्रधार कबूल करता हैं कि ''अस्मिन्क्षणे विस्मृतं खलु मया।'' अर्थात् मैं तो इसी क्षण सचमुच भूल ही गया था । इसप्रकार सूत्रधार क्षणिक 'विगलीतवेद्यान्तर' बनकर आज कौन सा नाटक मंचस्थ करना हैं वह भी भूल जाता हैं । नटी जब याद दिलाती हैं तभी उसे उसकी याद आती हैं । नाटक में दुष्यन्त शकुन्तलाकी स्मृति खो बैठता हैं । इसका यहॉ पर स्पष्ट अंकन हुआ है ।

प्रथम अंक में कवि एक दूसरा भी संकेत देता हैं । शकुन्तला जब सखियों के साथ तपोवन में वृक्षों और बेलियो का जलसिंचन कर रही थी तब अनसुया शकुन्तला को कहती है – इस नवमालिका बेल, जिसे तूने यह आम्रवृक्ष की स्वयंवरवधू मानी हैं, उसे तू भूल रही हैं ? तब शकुन्तला कहती हैं - ''तदात्मानमपि विस्मरिष्यामि'' तब तो मैं खुद अपने आपको ही भूल जाउ ना ! चौथे अंक में जब सुलभ कोपा महर्षि दुर्वासा का आगमन होता हैं तब शून्यहृदया शकुन्तला अपने आपको भूल गई हो ऐसे दुष्यन्त के विचारों में मग्न चित्रित हुई हैं, इसका यहाँ उल्लेख है ।

नाटक के चौथे अंक में ससुराल जा रही शकुन्तला को दोनो सखियाँ भेंटकर कहती हैं - ''सखि यदि नाम स राजा प्रत्यभिज्ञानमन्थरो भवेत् ततः तस्येदमात्मनामधेयाङ्कितमङ्गु- लीयकं दर्शय ।'' अर्थात् अगर वह राजा तूझे पहचानने में देर करे तो उसे उसके नामसे अंकित यह अँगुठी दिखाना । सखियों की इस बात से शकुन्तला कंपित हो उठती हैं । सखियों की बात में उसे आगत विरह की प्रतिध्वनि सुनाई देती हैं कि क्या राजा उसे भूल तो नहीं गया होगा ! इस वाक्य में कवि ने न्यायवैशेषिक दर्शन में प्रयुक्त ' प्रत्यभिज्ञान ' शब्द का प्रयोग कर राजा दुष्यन्त को प्रत्यभिज्ञानमन्थर कहा हैं । यहाँ पर कालिदास के मानसस्वभाव का सूक्ष्म परिचय प्राप्त होता हैं ।

नाटक के पांचवे अंक का प्रारंभ एक सटिक और सूक्ष्म घटना से होता हैं । धर्मासन से उठकर अंतःपुर की ओर आता राजा एक अत्यंत ही मधुर गीत का कान लगाकर श्रवण कर रहा होता हैं । राजा की एक समय की प्रियतमा हंसपदिका राजा को अन्योक्तिसभर ऐसे हृदयस्पर्शी वचन सुनाती हैं - '' अभिनव शहद के लंपट हे भ्रमर ! नव शहद के लिए आम्रवृक्ष की मंजरी को चूमकर अब उसे तू कैसे भूल गया ? कमल के दल में सिर्फ निवासकर क्युं संतुष्ट हुआ ? '' हंसपदिका के इस गीत के शब्दों ने राजा के चित्ततंत्र को और उर्मितंत्र तक को भी हिला दिया । राजा समझ में न आये ऐसी बेचेनी महसूस करने लगा । वह स्वगत सोचता हैं मुझे किसी प्रियजन का वियोग वास्तव में तो नहीं फिर भी यह गीत सुनकर -

रम्याणि वीक्ष्य मधुराँश्च निशम्य शब्दान्

पर्युत्सुकीभवति यत् सुखितो·पि जन्तुः ।

तच्चेतसा स्मरति नूनमबोधपूर्वं

भावस्थिराणि जननान्तरसौह्रदानि ।।[4]

अर्थात् सुन्दर वस्तु देखकर और मधुर शब्द सुनकर सुखी आत्मा भी बेचेन हो जाती हैं । इसका कारण यह हैं कि निःसन्देह वह व्यक्ति अज्ञानतावश दृढ संस्कार से स्थिर हुई जन्मान्तर की प्रीति को ह्रदय से याद कर रही है ।

इस श्लोक का गहनतम् भाव हमें प्रत्यभिज्ञान का अनन्य दर्शन कराता है । हंसपदिका के गीत से दुष्यन्त को शकुन्तला का प्यार याद आया पर, शकुन्तला नहीं । बाहरी दुनिया का होश उड़ते ही मनुष्य का अंतरतम् खुल जाता है । वहॉ किसी अवर्णनीय सृष्टि का दर्शन होता हैं । उसे किसी की याद आती हैं, पर किसकी ? वह पकड नहीं पाता । हिन्दु संस्कृति की मान्यता हैं कि दूसरे जन्म पर आत्मा के पहले जन्म के संस्कार नष्ट नहीं होते । कई बार पूर्व संस्कार के कारण वह मंथन महसूस करता है । किसी इष्टजन का वियोग न होने पर भी इष्टजन के विरह पर होती यह बेचेनी राजा को विस्मित करती है । राजा को लगता हैं कि सौन्दर्य का दर्शन और मधुर गीत का श्रवण किसी जन्मान्तर की प्रीति का अहसास कराती हैं । इस प्रकार यहॉ प्रत्यभिज्ञान तथा कर्म और पुनर्जन्म के सिध्धान्त द्वारा कवि का दर्शनशास्त्र का ज्ञान प्रस्तुत होता हैं । दर्शनशास्त्र की प्रतिध्वनि यहॉ सुनाई देती हैं ।

नाटक के पॉचवे अंक के 'शकुन्तलाप्रत्याख्यान' प्रसंग में राजा विस्मृति के भँवर में फसा हुआ है । शाप के कारण शकुन्तला विस्मृति के अकथनीय बोझ के नीचे दबा राजा कुछ भी समझने में असफल रहता है । शकुन्तला को देखकर वह स्वगत सोचता हैं –

इदमुपनतमेवं रूपमक्लिष्टकान्ति

प्रथमपरिगृहीतं स्यान्नवेत्यध्यवस्यन् ।

भ्रमर इव विभाते कुन्दमन्तस्तुषारं

न च खलु परिभोक्तुं नापि शक्नोमि मोक्तुम् ।।[5]

अर्थात् यह अक्लिष्ट कान्तिवान रूप जो मेरे सामने प्रस्तुत हुआ हैं उसका मैं पहले वरण कर चूका हूँ कि नहीं, उसका ठीकसे निर्णय नहीं कर पा रहा हूँ । जिस प्रकार सूर्योदय के समय ओस बूँद से आच्छादित कुन्दपुष्प को भ्रमर छो नहीं पाता और उस पर बैठ भी नहीं पाता, उसीप्रकार मैं भी इसे छोड़ नहीं सकता और अपना भी नहीं सकता । यहॉ जिसकी स्मृति भ्रमित हुई हैं ऐसे राजा के मन की नाट्यानुकूल असमंजसता व्यक्त हुई है । धर्मप्रवणता की मर्यादा में रहकर उसका ह्रदय इसप्रकार की असमंजसता का अनुभव करता हैं ।

शकुन्तला राजा को अँगुठी का प्रमाण न दिखा पाई इसलिए भूतकाल में की प्रणयगोष्ठि की एक बात राजा को याद दिलाती हैं । पर जिसे कुछ भी याद नहीं ऐसे राजा को यह मामूली प्रसंग चालाकी-सा लगता है ।

पॉचवे अंक में शाप के कारण राजा की स्मृतिविभ्रमता के दर्शन यहॉ भी होते हैं । वह कहता हैं - ''मूढः स्यामहमेषा वा वदेन्मिथ्येति संशये[6] ।'' अर्थात् मैं इसे भूल गया हूँ या यह झूठ बोल रही हैं, इस शंका से मैं व्याकुल हूँ । यहॉ राजा अपनी ओर से खूब सतर्क नजर आता हैं । पॉचवे अंक के अंत में भी वह कहता हैं –

कामं प्रत्यादिष्टां स्मरामि न परिग्रहं मुनेस्तनयाम् ।

बलवत्तु दूयमानं प्रत्याययतीव मां ह्रदयम् ।।[7]

अर्थात् तत्क्षण तिरस्कृत इस मुनिकन्या से मैं ने विवाह किया हो ऐसा मुझे कुछ याद नहीं आ रहा है । फिर भी अत्यंत ज्वलित यह मेरा ह्रदय कौन जाने क्युँ उसकी बात को सच मानने मुझे प्रेरित करता हैं ।

छठे अंक के प्रारंभ में राजा की अँगुठी का उल्लेख होने से अब शाप के असर में से उसकी स्मृति मुक्त होगी, यह सूचना मिलती हैं । राजा ने स्मृतिभंग से ही शकुन्तला का अस्वीकार किया हैं, उसप्रकार कंचुकी यहॉ स्पष्ट करता है । वह कहता हैं – ''यदैव खलु स्वाङगुलीयकदर्शनादनुस्मृतं देवेन सत्यमूढपूर्वा मे तत्रभवति रहसि शकुन्तला मोहात्प्रत्यादिष्टेति ।'' अर्थात् अँगुठी के दर्शन से ही राजा को याद आ गया कि उसने शकुन्तला के साथ गुप्त विवाह किया था और मात्र स्मृतिभंग से ही उसका तिरस्कार किया था । इसलिए वह आगे विदूषक को कहता हैं - ''सखे, सर्वमिदानीं स्मरामि शकुन्तलायाः प्रथमवृत्तान्तम् ।'' मित्र, अब मुझे शकुन्तला के प्रथम दर्शन का सारा वृत्तान्त याद आ रहा हैं ।

राजा शकुन्तला के साथ बिताये आनंद के स्मरणीय दिनों को याद करते हैं, पर वे दिन बित गये हैं । राजा तपोवन से नगर में आया और सबकुछ अदृश्य हो गया । वह विदूषक से कहता हैं –

स्वप्नो नु माया नु मतिभ्रमो नु क्लृप्तं नु तावत्फलमेव पुण्यम् ।

असंनिवृत्त्यै तदतीतमेव मनोरथा नाम तटप्रपातः ।।[8]

अर्थात् वह स्वप्न था ? वह माया थी ? कि वह बुध्धिभ्रम था ? या फिर ऐसे पुण्य का फल था जो पुण्य झुलस गया था ? वह अब चला गया हैं, कभी वापस आनेवाला नहीं । मेरे मनोरथ तट के प्रयत्न जैसे हैं ।

सातवें अंक में दुष्यन्त – शकुन्तला का मिलन होता है । तब राजा दुष्यन्त शकुन्तला को विस्मृति की बात करते हुए कहता हैं – स्मृतिभिन्नमोहतमसो दिष्टया प्रमुखे स्थितासि मे सुमुखी[9] । हे सुमुखि ! स्मृति पर पडे विस्मृति के बादल हट गये हैं । अस्मादङगुलीयकात् खलु स्मृतिरुपलब्धा । यह अँगुठी मिलते ही मेरी स्मृति जाग्रत हुई । ऋषि मारीच को भी वह कहता हैं – स्मृतिशैथिल्यात्प्रत्यादिशन्नपराध्धोऽस्मि । अर्थात् स्मृतिभंग के कारण मैं ने उसका त्याग किया और बाद में अँगुठी के दर्शन से मुझे याद आया कि मैं ने उससे विवाह किया हैं । नाटक के अंत में ऋषि मारीच

शकुन्तला को भी कहते हैं- शापादसि प्रतिहता स्मृतिरोधरुक्षे भर्तर्यपेततमसि प्रभुता तवैव[10] । शाप के कारण तेरे पति ने तेरा तिरस्कार किया था, स्मृतिभंग के कारण ही तेरा पति तुझ पर क्रुर हुआ था, पर अब उसका मन मोहतिमिर से मुक्त हुआ हैं । इसप्रकार सातवें अंक में कई जगह राजा दुष्यन्त के स्मृतिविभ्रम की बात हुई हैं । महर्षि मारीच शकुन्तला को सिख दे रहे हैं तब कहते हैं कि शाप के कारण राजा की स्मृति नष्ट हुई थी । इसप्रकार कवि कालिदास ने शाप के तत्व को शामिल कर राजा दुष्यन्त के व्यक्तित्व को निखार दिया है ।

इसप्रकार समग्र नाटक में प्रारंभ से अंत तक कवि कालिदास ने स्मृतिविभ्रम और प्रत्यभिज्ञान दोनों चीज को ध्यान में रखकर नाटक के कथानक को रमणीय बनाया है । कवि कालिदास के वेदान्त तथा न्यायवैशेषिक दर्शन के ज्ञान का भी हमें परिचय प्राप्त होता है । स्मृतिविभ्रम तथा प्रत्यभिज्ञान में कवि के दर्शनशास्त्र का ज्ञान सहज व संपूर्ण रूप से प्रटक हुआ हैं ।

पादटीप एवं सन्दर्भ ग्रन्थसूची

1 मल्लिनाथकृत सञ्जीविनी टीका, 6, हिन्दीव्याख्याकार-श्रीहरगोविन्दमिश्रः, रघुवंशमहाकाव्यम्,चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, पृ.15, वि.सं.2064.

2 जितेन्द्र जेटली,वसंत परीख, तर्कभाषा, सरस्वती पुस्तक भंडार, अमदावाद-1, पृ.41, द्वीतीय आवृत्ति-1973.

3 तदेव, 80, पृ.75

4 रेवाप्रसादद्विवेदी, कालिदासग्रन्थावली-द्वितीयो भागः, अभिज्ञानशाकुन्तल, 5/2, कालिदाससंस्कृतअकादमी,उज्जयिनी, 2008

5 अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 5/19

6 अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 5/29

7 अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 5/31

8 अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 6/10

9 अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 7/22

10 अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 7/32

****

प्रो.डॉ.दिनेशकुमार आर.माछी

सरकारी विनयन कोलेज शहेरा,जि.पंचमहाल, गुजरात

Copyright © 2012- 2016 KCG. All Rights Reserved. | Powered By : Knowledge Consortium of Gujarat